थारू समाज एक परिचय (एक समाजशास्त्रीय अध्ययन)

डॉ0 सुदर्शन कुमार*

थारू कौन हैं ? और कहाँ से आये हैं? या यही के मूल निवासी हैं? पर गहन अध्ययन और शोध का कार्य वर्षो से चल रहा है लेकिन अभी कोई एक मत नहीं हो पाया है, नेपाल के चितवन वन श्रृंखला से जुड़े भारतीय सीमा क्षेत्रों के मैनाटांड़ से लेकर वाल्मीकिनगर तक बसे लगभग साढ़े तीन लाख थारू इस मान्यता को खारिज करते हैं कि उनके पूर्वजों ने मध्यकाल में राजस्थान से पलायन किया था, कपितय इतिहासकार थारूओं की उत्पत्ति को मध्यकाल में निर्धारित करते हैं, मगर इसमें भी काफी मतभेद है, फरातत्ववेत्ता एवं जाने–माने इतिहासकार लक्ष्मण प्रसाद खोजवार का मानना है कि थारूओं की सभ्यता बौद्धधर्म से पहले की है, श्री खोजवार के अनुसार यहाँ हुई खुदाई में प्राप्त काले तथा लाल रंग की पाषाण मूर्तियां गंधार तथा चुनार कला परम्परा की है, थारू जाति के वनपुत्र वस्तुतः बौद्धपुत्र है, थारू थार क्षेत्र से पलायन कर यहां आए थे इसके कोई फरातात्विक संकेत तो अब तक नहीं मिले हैं, परन्तु उसके प्रागैतिहासिक भारत की जनजाति होने के पुरातात्विक साक्ष्य पश्चिमी चम्पारण के थरूहट क्षेत्र में जरूर मिले हैं, यहां यह गौर करने लायक तथ्य है कि थारू जाति के लोग चम्पारण की दोन नदी घाटी के क्षेत्र में बसे हुए हैं, दोन नदी गंडक की मुख्यधारा से जुड़ी गंगा में गिर जाती है, थरूहट क्षेत्र के अनेक सर्वेक्षण से यह तथ्य भी स्पष्ट हुआ है कि दोन नदी किसी जमाने में वाणिज्य–व्यापार का मुख्य जलमार्ग था।

थारुओं को भारत की आदिम जाति का ही मिश्रित रूप मानना तर्कसंगत दीखता है, केवल मुसलमानी आक्रमण के बाद पश्चिम से पूरब आकर बसने वाले आर्यो को थारू कहना उनके अति प्राचीन इतिहास के साथ अन्याय करना है। मूल रूप से भोजपुरी भाषी थारू है जो पश्चिमोत्तर बिहार में पश्चिमी चम्पारण और नेपाल सीमा से सटे तराई के इलाके में बसे हुए हैं, पश्चिमोत्तर बिहार के पश्चिमी चम्पारण जिलान्तर्गत शिवालिक पर्वत श्रृंखला में भारत–नेपाल सीमा पर भिखनाठोरी से वाल्मीकिनगर तक करीब तीन हजार वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में इस सर्वथा अनूठी जनजाति का निवास स्थल है, थारूओं के वर्गीकरण में आमतौर पर इन्हें भोजपुरी थारू कहा जाता है, वर्गीकरण का यह आधार मूल रूप से इनके द्वारा बोली जाने वाली भाषा है, इस इलाके में इस पूरे क्षेत्र को 'थरुहट' के रूप में जाना जाता है, मेहनती, श्रमजीवी और जीवट के धनी थारुओं को न मुसीबतों और अभावों की परवाह, न संघर्षमय जिन्दगी का गम, न खुदगर्जी, न छल–कपट और ईर्ष्या एवं द्वेष का इल्म है और न ही उन्हें नोचने–खसोटने का ज्ञान है, सही मायने में पहाड़ी मिट्टी और झरनों के स्वच्छ–निर्मल जल में पले ये गिरिजन धैर्य, सरलता, निरीहता, सहिष्णुता, भोलेपन तथा बहादुरी के बेमिसाल प्रतीक हैं।

थरुहट क्षेत्र में हुई खुदाई में मातृदेवी की कुछ मूर्तियां मिली हैं, थारुओं की मातृदेवी सहोदरा माई जिसे सुभद्रा भी कहा जाता है, की काले पत्थर की प्रतिमा हड़प्पा की मातृदेवी शैली पर बनी है, थारू समाज आज भी मातृप्रधान है, थारू मर्द घर में बैठे रहते हैं या थोड़ा–बहुत खेतीबारी, पशुपालन आदि का कार्य करते हैं, जबकि थरूनी महिलाएं घर–गृहस्थी के तमाम कार्य स्वयं निबटाती हैं, मेहनत के कार्यों में भी वे थारू फरूषों के मुकाबले आगे रहती हैं, पारिवारिक–सामाजिक निर्णयों में भी महिलाओं की अहम् भूमिका होती है और थरुनियों की राय को ही सर्वोपरि माना जाता है, आदिम मातृप्रधान समाज का माहौल आज भी थरुहट में जीवित है।

पुरातत्ववेता श्री खोजवार और पूर्व एटार्नी जनरल डा. आर.एन.पी. सिंह के अनुसार थारुओं पर ब्रिटिश संग्रहालय लंदन से इकट्ठी सामग्री के विश्लेषण से यह पता चलता है कि नंदवंश के लिए मौर्यवंशियों ने जिस मौर्य जाति के कबीले का इस्तेमाल किया था वे यही थारू थे। चन्द्रगुप्त मौर्य की माता मूरा नाम की दासी थी। श्री सिंह के अनुसार वह एक थरून ही थी, उनके इस तर्क की फष्टि ख्यात इतिहासकार सदा शिव अलतेकर ने भी की है, मौर्य वंश से संबद्ध होने का प्रत्यक्ष प्रमाण आज भी सिर में मोर के पंख लगाने की प्रथा तथा छाता वगैरह में अन्य पक्षियों के पंख लगाने की परम्परा है, मौर्य जनजाति की यह आदिकालीन विशिष्टता है, थारुओं की प्रागैतिहासिक संस्कृति की पुष्टि उसकी कला से भी होती है, मध्यप्रदेश के भीमपेठका तथा आफगानिस्तान के बामियान के प्रागैतिहासिक भित्तिचित्रों की तरह थरुहट में आज भी मिट्टी की दीवारों पर भित्तिचित्र बनाने की परम्परा है, भित्तिचित्रों में पशु–पक्षियों, प्राकृतिक दृश्यों तथा अन्य आकृतियों के चित्रण को प्रफांस की अल्तामीरां तथा स्पेन की लासको कला श्रृंखला के समकक्ष रखा जा सकता है।

पश्चिमोत्तर बिहार के अलावा थारू जनजाति का मुख्य निवास क्षेत्र उत्तर प्रदेश और उत्तरांचल की तराई और भांवर की संकरी पट्टी का प्रदेश है जो कुछ पूर्व में बिहार के उत्तरी भाग तक विस्तृत रूप में फैला हुआ है, यह संकरी पट्टी केवल 25 किलोमीटर चौड़ी है पर लम्बाई में यह लगभग 6000 किलोमीटर है जो

***एम.ए., पीएच.डी. (समाजशास्त्र) शारीरिक शिक्षक गवर्नमेंट माउण्ट एवरेस्ट मधयविद्यालय, कंकड़बाग, पटना–20**

नैनीताल जिले के कीछा, खटीमा, रामफरा, सितारगंज, नामकमत्ता, बनबसा आदि क्षेत्रों से शुरू होकर पूर्व उत्तर प्रदेश के पीलीभीत, खीरी और बिहार के पश्चिमी चम्पारण जिले के रामनगर से लेकर वाल्मीकिनगर तक विस्तृत है।

'थारु' शब्द की उत्पत्ति के बारे में काई एक निश्चित मत नहीं है, किन्हीं का मत है कि ये अथर्वेद से संबंधित है, पहले इनका नाम 'अथरू' था जो बाद में थारू हो गया, कुछ विद्वानों का मत है कि 'थारू' शब्द का अर्थ 'ठहरा हुआ' से है, चूंकि इस मलेरिया और मच्छरों की भांवर–तराई पट्टी में भी ये लोग अपने जीविका–निर्वाह और निवास के लिए कठिनाइयों का सामना करते हुए ठहरे हुए हैं इसलिए इनका नाम थारु हो गया, मदिरा को भी 'थार' कहा जाता है, अतः कुछ लोगों का मानना है कि इन लोगों का नामकरण का आधार मदिरा ही है, मदिरा पान का इनमें आम प्रचलन है, थारू लोगों में विवाह की कई प्रथाएँ हैं, उनमें एक प्रथा वधू का अपहरण करने की भी है, इस अपहरण प्रथा का नाम 'थारू' है, अतः इस कारण भी इन लोगों का नाम थारु हो सकता है।

थारुओं के बसाव क्षेत्र की जलवायु मानसूनी है, ग्रीष्मकाल में तापमान 38 डिग्री सेल्सीयस से 44 डिग्री सेल्सीयस तक रहता है, ग्रीष्मकालीन मानसून से वर्षा 125 से 150 से.मी. तक होती है जो अधिकांशतः जुलाई से सितम्बर तक होती है, उँफचे तापमान, वर्षा और वायुमंडल में आर्द्रता के ज्यादा होने से इस क्षेत्र में मानसूनी वन जैसे साल, शीशम, तेंदू, सेमल, खैर, बांस, बरगद आदि के वृक्ष और लम्बी घास पैदा होती है, अधिक तापमान, उफँची आर्द्रता और दलदली भूमि के कारण वातावरण में मच्छर ज्यादा उत्पन्न होते हैं, जो मलेरिया के कारण होते हैं, सामान्यः इस क्षेत्र की जलवायु स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है परन्तु सघन वन प्रदेश के उन्मुक्त वातावरण में रचे–बसे थारूओं को यहां का जीवन रास आता है। थारुओं का मुख्य भोजन चावल का भात, मछली, दाल, दूध, दही और आखेट किए हुए पशु–पक्षियों का मांस है, मक्का की रोटी, साग, मूली, गाजर, आलू आदि भी इनके भोजन में शामिल हैं, भोजन के बर्तनों में ताम्बे, पीतल और मिट्टी के पात्र तथा लोहे के तवे और कड़ाही का प्रयोग आमतौर पर होता है, थारु फरूषों की पोशाक धोती–कुर्ता और गमछा है, कुछ थारू टोपी भी पहनते हैं, कुछ थारू युवक सिर के बाल को बढ़ाकर रखते हैं, दाढ़ी बढ़ाकर रखने का इनमें कोई रिवाज नहीं है, थारू महिलाओं की पोशाक धोती और छोटी अंगरखी है, महिलाएं गहने की शौकीन होती हैं, महिलाओं में चांदी के आभूषण पहनने का आम प्रचलन है, हाथों और पैरों में चांदी के कड़े, भुजाओं पर बाजूबंद, नाक में नथ और गले में रंगीन मूंगों की मालाएं तथा गुलबंद पहनने का प्रचलन है, महिलाओं में बनन–संवरने की खास प्रवृति पाई जाती है, नवयौवनाएं लहंगा–चोली पहनना ज्यादा पसंद करती हैं,

बालों में फूलों की वेणियाँ गूंथने में भी उनकी रुचि होती है, वनकुसुमों से साज–श्रृंगार करने में थारु नवयौवना पारंगत होती है, पश्चिमी चम्पारण की थारू महिलाएँ स्थानीय नदियों में उपलब्ध घोंघा, सितुआ और सपी के तरह–तरह के आभूषण बनाने में सिद्धहस्त है।

थारुओं का घर अधिकतर मिट्टी की कच्ची ईंटों, बांस, घास–फूस और जंगल में सहज रूप से मिलनेवाली लकड़ियों से बने होते हैं, मकानों के दीवार को प्रायः गोबर, पीली मिट्टी से वे लोग लिपते हैं, दीवारों को कलात्मक ढंग से सजाया भी जाता है, पर सोने–बैठने के कमरे को ही कोठार की तरह प्रयोग किया जाता है, रसोई के लिए छोटा दालान–सा एक अलग कमरा होता है, घर के बाहरी भाग में एक खुला हुआ आंगन होता है, थारू महिलाएं घर की सफाई पर काफी ध्यान देती है, इनका घर–आंगन काफी साफ–सुथरा हता है।

अधिकतर थारू अंधविश्वासी होते हैं, झाड़–फूंक और ओझा–गुनियों पर उनका अटूट विश्वास होता है, थारु बहुत इलाकों में शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं का घोर अभाव है, अधिकांश थारु रोगों के उपचार में जड़ी–बूटी का प्रयोग करते हैं, भूत–प्रेत में विश्वास के कारण वे लोग तरह–तरह की पूजा–अर्चना और बलि आदि चढ़ाने का आयोजन भी करते रहते हैं, थारूओं में बाल–विवाह की प्रथा आज भी मौजूद है, कई बार तो गर्भस्थ शिशु तक की शादी तय कर दी जाती है, वैसे अब सुधार की दिशा में किए गए कतिपय प्रयास के कारण सामूहिक शादी आदि का कम खर्च पर आयोजन होने लगा है, सबसे सुखद बात यह है कि थारूओं में तिलक–दहेज आदि लेने–देने का कोई प्रचलन नहीं है, थारूओं में विवाह–विच्छेद का अधिकार फरूष को नहीं बल्कि महिलाओं को हैं।

प्रकृति की गोद में रहनेवाले थारू मन–मिजाज में सदा प्रसन्नचित और हमेशा हंसते–खिलखिलाते रहते हैं जिसके कारण इनके अभावों और पीड़ा को बाहरी दुनिया के लोग देख–समझ नहीं पाते हैं। तमाम तरह की आधुनिक सुविधाओं से वंचित रहने के बावजूद इन्हें कभी किसी से कोई शिकायत नहीं है।

संदभ सूची–

1. एस.के. श्रीवास्तव, दि थारुजः ए स्टडी इन कल्चरल डाइनामिक्स
2. चौधरी बुद्धदेव, ट्राइबल डेवलपमेंट इन इण्डिया
3. राजीव लोचन शर्मा 'जनजातीय जीवन और संस्कृति', सहचारी प्रकाशन, कानपुर
4. एम.एल.पटेल, चेंजिंग लैंड प्रॉब्लम्स ऑफ ट्राइबल इंडिया
5. सिपाही सिंह 'श्रीमंत' 'थरुहट के लोकगीत' (प्रकाशक–श्रीमंत प्रकाशन, स्टेशन रोड, मढ़ौरा)
6. एन.कुमार तथा ए.के. मैत्रे, 'रिप्रोडक्टिव परफॉरमेन्सेज ऑफ थारू वोमन्स'

****